ग्वालियर एवं उसके निकटवर्ती क्षेत्रों में स्थित

जैन सांस्कृतिक केन्द्र

डा० वी० बी० लाल

भारत की प्राचीनतम संस्कृतियों में से एक जैन संस्कृति, जिसे श्रमण संस्कृति भी कहा जाता है, की व्यापकता उसकी एक प्रमुख विशेषता रही है। यों तो सम्पूर्ण भारतवर्ष में जैन संस्कृति के प्रतीक स्वरूप अनेकों तीर्थ, मन्दिर, मूर्तियां आदि अनेक प्रकार के स्मारक उपलब्ध होते हैं, परन्तु उत्तर भारत और मध्य भारत के बीच का क्षेत्र इस दृष्टि से और भी अधिक सम्पन्न क्षेत्र है। ग्वालियर के निकटवर्ती क्षेत्र जैन पुरातत्व के वैभव से भरे पड़े हैं, विभिन्न अंचलों में युगयुगीन जैन संस्कृति के अनेकों प्रतीकात्मक स्मारक उपलब्ध हैं। इसका एक प्रमुख कारण सम्भवतः यह भी है कि विभिन्न जैन तीर्थंकरों व साधुओं ने देश भर में पैदल विहार कर अपने धर्म का प्रचार किया और लोगों को अहिंसात्मक जीवन पद्धति अपनाने का उपदेश दिया। जो क्षेत्र तीर्थंकरों के बिहार में प्रमुख रहे उनमें बिहार, उत्तरप्रदेश और उत्तरी मध्यप्रदेश के क्षेत्र प्रमुख हैं।

ग्वालियर उत्तरी मध्यप्रदेश के प्राचीनतम क्षेत्रों में से एक है। ग्वालियर के निकट पवाया नाम के ग्राम को वेदों में पद्मावती नामक ऐतिहासिक नगरी मानने में अनेकों इतिहासकार एकमत हैं। यहाँ प्राप्त प्राचीन पुरातत्वीय सामग्री से यह तथ्य बहुत कुछ पुष्ट होता है। मुरैना जिले में सिहोनिया, दतिया जिले में स्वर्णगिरी, शिवपुरी जिले के नरवर, गुना जिले में चँदेरी, तुमैन और झरकौन जैगर (बजरंग गढ़) तथा ग्वालियर के अमरौल व दुर्ग आदि स्थल भी प्राचीन ऐतिहासिक महत्व व पुरातत्विक सम्पदा की दृष्टि से सम्पन्न क्षेत्र हैं। इन सभी क्षेत्रों में जो कुछ भी प्राचीनतम पुरातत्विक अवशेष एवं अन्य सामग्री उपवब्ध हुई है उसका बड़ा भाग जैन संस्कृति से सम्बन्धित है। इस प्रकार ग्वालियर और उसका निकटवर्ती सम्पूर्ण क्षेत्र जैन पुरातत्व की दृष्टि से अत्यधिक सम्पन्न क्षेत्र है तथापि जैन संस्कृति के कुछ प्रमुखतम केन्द्रों के रूप में कुछ क्षेत्रों का ऐतिहासिक दृष्टि से बड़ा ही महत्व है। यहाँ ऐसे ही कुछ प्रमुख स्थलों की चर्चा की गई है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिद्धक्षेत्र स्वर्णागिरी —

दतिया स्टेशन से तीन मील की दूरी पर स्थित स्वर्णागिरी (सोनागिरी) धार्मिक दृष्टि से सिद्धक्षेत्र माना जाता है। जिस ग्राम में यह क्षेत्र स्थित है वह सनावल कहलाता है, जो "श्रमणाचल" का अपभ्रंश रूप प्रतीत होता है, जिसका तात्पर्य श्रमण संस्कृति के प्रमुख अंचल से है। जिससे प्रतीत होता है कि यह क्षेत्र श्रमण दिगम्बर जैन साधुओं की प्राचीनतम तपोभूमि रही है।

वर्तमान में यहाँ एक पहाड़ी बनी है जिस पर कुल 77 मन्दिर बने हुए हैं। नीचे के निकटवर्ती भू-भाग में भी सोलह भव्य मन्दिर बने हैं। इन सारे मन्दिरों में पहाड़ी के शीर्षस्थ स्थान पर बने तीर्थंकर चन्द्रप्रभू के मन्दिर का विशेष महत्व है। पहाड़ी की सर्वोच्च शिला पर उत्कीर्ण तीर्थंकर चन्द्रप्रभू की प्रतिमा के चारों ओर भव्य मन्दिर बना है, जिसमें बाद में समय समय पर अन्य अनेकों तीर्थंकर प्रतिमाएँ भी विराजमान की गई हैं।

तीर्थंकर चन्द्रप्रभू की प्रतिमा यहाँ की प्राचीनतम एवं इस मन्दिर की मूल नायक प्रतिमा है। जैन शास्त्रों के उल्लेख के अनुसार इस स्थल पर तीर्थंकर चन्द्रप्रभू स्वामी का समवशरण विहार करते समय ठहरा था, और उन्होंने काफी समय तक यहाँ उपदेश दिये थे। इस कारण इस स्थान का अत्याधिक धार्मिक महत्व है। इस घटना के प्रतीक स्वरूप ही यहाँ तीर्थंकर चन्द्रप्रभू की यह प्रतिमा उत्कीर्ण की गई। यह मनोज्ञ प्रतिमा खड़गासन मुद्रा में है जिसकी ऊँचाई साढ़े सात फीट है। प्रतिमा के नीचे के भाग में उत्कीर्ण हिन्दी लेख में जो कि किसी प्राचीन लेख के आधार पर लिखा गया है, इस प्रतिमा और मन्दिर को सम्वत् 335 वि. में निर्मित दर्शाया है। इस लेख के अनुसार श्री श्रवणसेन कनकसेन ने इस मन्दिर का निर्माण सं. 335 वि. में करवाया तथा सं. 1883 में पुनः मथुरा के सेठ लक्ष्मीचन्द्रजी द्वारा इस मन्दिर का जीर्णोद्धार करवाया गया। इस जीर्णोद्धार के समय मूल शिलालेख चरणों के नीचे होने से दब गया पर सेठ लक्ष्मीचन्द्र जी ने इसका अनुवाद कराकर लगा दिया जिसे अविश्वसनीय मानने का कोई कारण नहीं है।

जैन ग्रन्थों के उल्लेखों के अनुसार यह पर्वत जैन साधुओं की प्रमुख साधना स्थली रहा है, व लगभग साढ़े पाँच करोड़ साधुओं ने इसे अपनी सिद्धभूमि होने का गौरव प्रदान किया है। साधुओं के संघ के विहार के सम्बन्ध में उल्लेखनीय प्राचीनतम घटना सन् 258 ई. के लगभग की बताई जाती है जब कि सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य के समय में महाकाल पड़ने पर जैन साधू संघ का एक अंश चलकर यहाँ आकर ठहरा। उन्होंने वहाँ जो अपना शिलालेख लगवाया वह अभी तक उपलब्ध है। सम्राट अशोक के शासन काल में एक उपशासक कुमारपाल की यहाँ नियुक्ति किये जाने का भी उल्लेख मिलता है। कुछ विद्वानों के मतानुसार अपने प्रारंभिक काल में जब सम्राट अशोक का झुकाव जैन धर्म की ओर था, उन दिनों सम्राट अशोक ने भी इस स्थान की वन्दना की थी।

पहाड़ से मोक्ष को प्राप्त साढ़े पाँच करोड़ मुनियों में सर्वाधिक प्रामाणिक ऐतिहासिक उल्लेख मुनि नंग-अनंग कुमार का उपलब्ध होता है। इनके स्मारक के रूप में तीर्थंकर चन्द्रप्रभू के मन्दिर के निकट ही इनके चरण प्रतिष्ठापित हैं। पहाड़ी पर बने अन्य मन्दिर भी अत्याधिक भव्य हैं तथा उनमें विराजमान प्रतिमाओं में से अनेकों काफी प्राचीन हैं। व्यवस्थापन समिति द्वारा एक मन्दिर के बरामदों में पुरातत्व संग्रहालय के रूप में एक वीथिका बना दी गई है। इसमें भी सन् 300 ई. तक की अनेकों प्राचीन जैन प्रतिमायें खण्डित रूप में उपलब्ध हैं। इनके साथ ही समवशरण आदि के कुछ अवशेष भी इस संग्रहालय में हैं। पहाड़ी पर प्राकृतिक रूप से बने एक कुण्ड का आकार नारियल जैसा होने से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वह नारियल कुण्ड, तथा एक विशाल शिला ठोकने पर आवाज करने के कारण बजनी शिला के नाम से जानी जाती हैं। नीचे के मन्दिरों में भट्टारक हरेन्द्रभूषण जी का मन्दिर प्राचीन भी काफी है।

विगत कुछ समय पूर्व बने बाहुबली स्वामी का मन्दिर, मानसाम्भ तथा कुछ अन्य मन्दिर भी भव्य हैं। तीर्थंकर चन्द्रप्रभू के समवशरण की विश्राम स्थली तथा पाँच करोड़ साधुओं की सिद्ध स्थली होने के कारण जैन संस्कृति का यह प्राचीन केन्द्र ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण होने के साथ-साथ धार्मिक दृष्टि से भी अत्याधिक महत्वपूर्ण सिद्ध क्षेत्र (तीर्थ) माना जाता है।

सिंहोनिया—

मुरैना जिले में स्थित सिंहोनिया नामक नगरी इस क्षेत्र की प्राचीनतम ऐतिहासिक नगरियों में प्रमुख है।

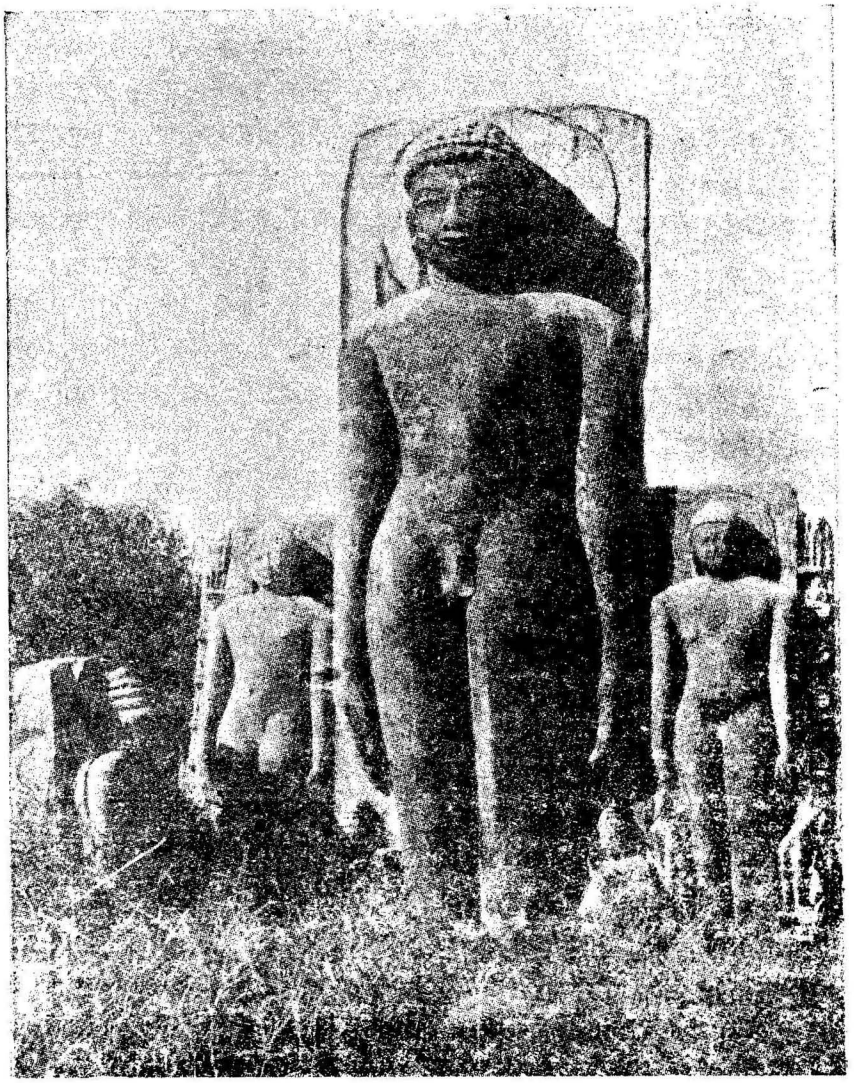

चैत्रनाथ की प्रतिमाऐं सिंहोनिया (जिला मुरैना) (श्री हरिहर निवास जी द्विवेदी के सौजन्य से)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्राचीन ग्रन्थों में नाग सम्राटों की राजधानी क्रान्तिपुरी इसी नगरी का ऐतिहासिक नाम है। यहाँ स्थित माता के मन्दिर के चारों ओर तथा निकटवर्ती अन्य मन्दिरों में पहली से पन्द्रहवीं शताब्दी के मध्य पुरातत्विक अवशेष भरे पड़े हैं, इनमें अनेकों जैन धर्म से सम्बन्धित हैं, अभी तक इन पर पर्याप्त शोध के अभाव में इनके बारे में बहुत से तथ्य अज्ञात हैं। यहीं ग्वालियर के तोमर राजा वीरमदेव के समय में बना विशाल एवं भव्य चैत्रनाथ मूर्ति समूह अभी भी सुरक्षित है। इसमें चैत्रनाथ की जैन मूर्ति पर वि. सं. 1467 (सन् 1410 ई.) का एक शिलालेख अंकित है।[1]

दूबकुण्ड (श्यौपुर)—

मुरैना जिले में ही श्यौपुर तहसील में स्थित दूबकुण्ड नामक स्थान भी जैन संस्कृति का प्राचीन केन्द्र रहा है। यहाँ भी कई प्राचीन जैन मूर्तियों के अवशेष प्राप्त होते हैं। यहाँ प्राप्त वि. सं. 1145 (सन 1088 ई.) के विक्रमसिंह के शिलालेख से प्रतीत होता है कि इस क्षेत्र के कच्छपघात राजाओं का प्रश्रय भी जैन सूरियों को प्राप्त हुआ था। शान्तिषेण सूरि और उनके शिष्य विजयकीर्ति द्वारा एक प्रशस्ति लिखी गई थी।[2] यहाँ के जैन मन्दिर के शिलालेख वि. सं. 1152 (सन् 1095 ई.) से ज्ञात होता है कि यहाँ काष्ठा संघ के महाचार्यवर्य श्री देवसेन के पादुका चिन्ह की पूजा होती थी।[3]

पवाया (पद्मावती)—

ग्वालियर जिले में डबरा के निकट स्थित पवाया नामक ग्राम ऐतिहासिक दृष्टि से इस सारे क्षेत्र में स्थित प्राचीनतम नगरों में से एक है। अनेकों इतिहासकारों के अनुसार भारतीय वेदों में वर्णित पद्मावती नामक ऐतिहासिक नगरी यही पवाया है। यहाँ अत्याधिक प्राचीन पुरातत्विक सम्पदा उपलब्ध है। उपलब्ध अवशेषों में से कुछेक इस क्षेत्र में जैन संस्कृति के प्रचुरतापूर्ण प्रसार की साक्ष्य प्रस्तुत करते हैं। यहाँ उपलब्ध प्राचीन अवशेषों पर अभी पर्याप्त शोध की आवश्यकता है। यहाँ प्राप्त मूर्तियों में एक मूर्ति विचित्र प्रकार की उपलब्ध हुई है जिसमें एक व्यक्ति अपने सिर के ऊपर एक ध्यानस्थ नग्न आकृति की प्रतिमा को विराजमान किये हुए है। यह प्रतिमा जैन प्रतिमा प्रतीत होती है, जो अब तक उपलब्ध प्रतिमाओं की तुलना में विचित्रताएँ लिये हुए एवं अनूठी है। इसके अतिरिक्त कुछ अन्य प्रतिमाएँ आदि भी उपलब्ध हैं।

अमरौल तथा सोहजना—

ग्वालियर जिले में ही ग्वालियर के दक्षिण पूर्व में स्थित अन्य ग्राम अमरौल में भी अनेकों उल्लेखनीय प्रतिमाएँ उपलब्ध हुई हैं। इनमें पूर्व मध्यकाल की पार्श्वनाथ और आदिनाथ की प्रतिमा का सूक्ष्मता के साथ प्रतिरूपण हुआ है जिसमें तीर्थंकर के चारों ओर यक्षों की वामन आकृतियाँ पद्म पीठों पर सुखासन-मुद्रा में बैठी हुई दर्शायी गयी हैं। पद्मपीठ कमलपत्रावली द्वारा भव्य रूप से अलंकृत हैं।[4]

ग्वालियर—

ग्वालियर नगर स्वयं भी जैन संस्कृति के प्राचीनतम केन्द्रों में से एक है। यहाँ जैन संस्कृति से सम्बन्धित

1. आर्को. सर्वे. रि. भाग 2, पृ. 396।
2. ग्वालियर राज्य अभिलेख, क्र. 54।
3. ग्वालियर राज्य अभिलेख, क्र. 58।
4. जैनकला एवं स्थापत्य, खण्ड 1, भारतीय ज्ञानपीठ, भाग 4, वास्तु स्मारक एवं मूर्तिकला (600 से 1000 ई.। अध्याय 16, मध्य भारत कृष्णदेव। पृ. 177–78।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(सुहजना से प्राप्त प्राचीन जैन प्रतिमा) (श्री हरिहर निवासजी द्विवेदी के सौजन्य से)

प्रमाण आठवीं शती तक के प्राचीन उपलब्ध होते हैं। ग्यारहवीं शती में ग्वालियर दुर्ग (गोपाचल गढ़) के ऊपर एक जैन मन्दिर उपलब्ध होने के पर्याप्त प्रमाण उपलब्ध हैं। दुर्ग के अतिरिक्त ग्वालियर नगर के निकटवर्ती क्षेत्रों में भी अनेकों प्राचीन प्रतिमाएँ व अवशेष उपलब्ध होते हैं। इनमें तिघरा बाँध के पास स्थित सौजना (सुहजना) ग्राम में प्राप्त प्राचीन जैन प्रतिमाएँ उल्लेखनीय हैं।

कच्छपघात राजाओं के काल में यहाँ जैन संस्कृति का प्रसार अवश्य ही कुछ कम हुआ था परन्तु चौदहवीं–पन्द्रहवीं शती में तोमर राजाओं के काल में ग्वालियर में जैन संस्कृति का व्यापक एवं अभूतपूर्व प्रचार हुआ। तोमर काल में ग्वालियर में जैन धर्मावलम्बी अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते थे। इस काल में अनेकों जैन मन्दिरों का निर्माण हुआ, जो आज उपलब्ध नहीं हैं। ग्वालियर दुर्ग के चारों ओर निर्मित

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुहा मन्दिर और विशाल तीर्थंकर प्रतिमा समूह भारतीय पुरातत्व की अद्वितीय उपलब्धि हैं। बाबर के शासन काल में खण्डित ये जैन प्रतिमाएँ आज भी आकर्षक एवं मनोज्ञ स्वरूप लिये हैं तथा इनका अत्यधिक ऐतिहासिक एवं पुरातत्विक महत्व है। उरवाई द्वार पर स्थित आदिनाथ की प्रतिमा इस सम्पूर्ण मध्य भारतीय क्षेत्र में स्थित विशालतम प्रतिमा है तथा एक पत्थर की बावड़ी पर स्थित गुहा मन्दिर एवं विशाल मूर्तियों का समूह देश में अद्वितीय है। इतनी विशाल प्रतिमाएँ इतनी बड़ी संख्या में एक स्थान पर एक साथ कहीं नहीं मिलतीं।

ग्वालियर में बने जैन मन्दिरों में भी अनेकों प्राचीन एवं भव्य मन्दिर हैं, जिनमें प्राचीन प्रतिमाएँ एवं साहित्य उपलब्ध है। इस प्रकार ग्वालियर नगर स्वयं भी जैन संस्कृति का एक प्रमुख केन्द्र रहा है तथा उसके सांस्कृतिक विकास में जैनों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

नरवर—

शिवपुरी जिले में शिवपुरी से 40 किलोमीटर उत्तर-पूर्व स्थित नरवर नगर नल और दमयन्ती के काल में नल द्वारा बसाया गया नगर माना जाता है। प्राचीन उल्लेखों में इसे नलपुर कहा गया गया है। यहाँ अनेक जैन मन्दिरों और मूर्तियों का निर्माण हुआ। इन मन्दिरों और मूर्तियों के उपयोग में आए श्वेत पाषाण पर यहाँ इतना अच्छा पालिश किया गया कि वह संगमरमर-सा दिखता है। नरवर के यज्वपाल, गोपाल देव और आसल्ल देव नामक राजाओं ने कला के विकास में व्यापक योग दिया।[5] तेरहवीं और चौदहवीं शताब्दी में नरवर और इसके आसपास जैन धर्म का बहुत प्रसार हुआ। वि. सं. 1314 से 1324 के मूर्तिलेखों युक्त सैकड़ों जैन मूर्तियाँ नरवर में प्राप्त हुई हैं। जज्ववेल राजाओं के अधिकांश शिलालेखों के प्रशस्तिकार जैन मुनि हैं। यहाँ के बड़े जैन मन्दिर में वि. सं. 1475 (सन् 1418 ई.) का एक ताम्रपत्र भी उपलब्ध है जिसमें महाराजाधिराज वीरमेन्द्र तथा उनके मंत्री साधु कुशराज का उल्लेख है। नरवर के जैन मन्दिरों में जैन साहित्यकारों की अनेकों प्राचीन रचनाएँ व धर्मग्रन्थ भी उपलब्ध होते हैं जो इस क्षेत्र में जैन संस्कृति के विकास के अध्ययन की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

चन्देरी (गुना)—

गुना जिले में चन्देरी और तुमैन जैन कला के महत्वपूर्ण केन्द्र थे। चन्देरी में अनेकों प्राचीन एवं विशाल जैन मन्दिर स्थित हैं। चन्देरी और उसके समीपवर्ती क्षेत्र में इस काल की पाषाण मूर्तियाँ बहुत बड़ी संख्या में प्राप्त हुई हैं। उनमें तीर्थंकरों और देवियों के अतिरिक्त अन्य मूर्तियाँ भी हैं, जिनमें बहुत-सी अभिलिखित हैं। लगभग 1400 ई. में चन्देरी पट्ट की स्थापना हुई। श्री भट्टारक देवेन्द्र कीर्ति और उनके उत्तराधिकारियों ने उस क्षेत्र में जैन धर्म के प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। विदिशा जिले का सिरोंज, चन्देरी के भट्टारकों के कार्यक्षेत्र में आता था।[6] इन मन्दिरों में बहुत-सा प्राचीन साहित्य एवं अभिलेख भी उपलब्ध है।

उपलब्ध प्रचुर सामग्री के संरक्षण एवं शोध की आवश्यकता—

इस प्रकार ग्वालियर और उसके निकटवर्ती क्षेत्रों में जैन संस्कृति का व्यापक प्रचार-प्रसार रहा है, और

5. जैन कला एवं स्थापत्य, खण्ड 1, भाग 6, भारतीय ज्ञानपीठ; वास्तु स्मारक एवं मूर्तिकला (1300 से 1800 ई.) अध्याय 27—मध्य भारत, पृष्ट 356।
6. जैन कला एवं स्थापत्य, खण्ड 2, भाग 6, वास्तु स्मारक एवं मूर्तिकला (1300 से 1800 ई.) अध्याय 27, मध्य भारत पृष्ठ 356 भारतीय ज्ञानपीठ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसकी पुष्टि हेतु प्रचुर मात्रा में पर्याप्त ऐतिहासिक सामग्री भी उपलब्ध है, परन्तु यह बड़े ही खेद का प्रसंग है कि जैन संस्कृति के पोषकों ने जहाँ सैकड़ों वर्षों तक अपनी इस प्राचीन सांस्कृतिक सम्पदा का संरक्षण एवं सम्वर्द्धन किया वहाँ वे अब इस पर अधिक ध्यान नहीं दे रहे हैं। आज प्राचीन सम्पदा के संरक्षण एवं उसके संग्रहीकरण की नितान्त आवश्यकता है जिसकी पूर्ति शीघ्र ही की जाना चाहिये। साथ ही इस दिशा में पर्याप्त शोध की भी आवश्यकता है ताकि इस संस्कृति एव क्षेत्र के प्राचीन एवं गौरवमयी पक्ष को उजागर किया जा सके। ग्वालियर और इसके निकटवर्ती क्षेत्र में जैन संस्कृति, पुरातत्व एवं प्राचीन साहित्य से सम्बन्धित इतना विशाल भण्डार उपलब्ध है कि उसके संग्रह से एक राष्ट्रीय स्तर का विशाल संग्रहालय निर्मित किया जा सकता है; साथ ही उसके सम्बन्ध में शोध-कार्य को प्रोत्साहित करने के लिये एक नियमित शोध संस्थान चलाया जा सकता है। महावीर निर्वाण महोत्सव के 2500वें वर्ष में इस दिशा में रुचि रखने वाले कुछ लोग आगे आएँ तो इस क्षेत्र की प्राचीन संस्कृति को उजागर करने की दिशा में महत्वपूर्ण सहयोग तथा भारतीय संस्कृति के विशाल ज्ञान भण्डार को महत्वपूर्ण योगदान प्रदान कर सकते हैं।

□ □

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org